इकाई 12 बौद्ध धर्म, जैन धर्म तथा आजिवक*

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य
12.1 प्रस्तावना
12.2 नये धार्मिक विचारों का उद्भव
12.3 भौतिक परिवेश
12.4 गौतम बुद्ध और बौद्ध धर्म की उत्पत्ति
  12.4.1 बौद्ध मत का विकास
12.5 जैन धर्म की उत्पत्ति
  12.5.1 महावीर के उपदेश
  12.5.2 जैन धर्म का विकास
12.6 अन्य विधर्मिक विचार
12.7 आजिवक संप्रदाय
12.8 नये धार्मिक आंदोलनों का प्रभाव
12.9 सारांश
12.10 शब्दावली
12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.12 संदर्भ ग्रंथ

12.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप यह जान पाएँगे कि :

- लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में नये धार्मिक विचारों के उदय की पृष्ठभूमि क्या थी;
- बौद्ध मत और जैन मतों का उद्भव और विकास कैसे हुआ;
- इन धर्मों के मुख्य सिद्धान्त क्या थे;
- इन धर्मों का समकालीन समाज पर क्या प्रभाव पड़ा; और
- लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में प्रचलित अन्य विधर्मिक विचार क्या थे।

12.1 प्रस्तावना

भारतीय इतिहास में छठी शताब्दी बी.सी.ई. का बड़ा महत्त्व है क्योंकि यह काल नये धर्मों के विकास से सम्बद्ध है। हम पाते हैं कि इस काल में ब्राह्मणों के अनुष्ठानिक रूढ़िवादी विचारों का विरोध बढ़ रहा था। फलतः बहुत सारे भिन्न मत वाले धार्मिक आंदोलनों का उद्भव हुआ। इनमें से बौद्ध मत एवं जैन मत संगठित तथा लोकप्रिय धर्मों के रूप में विकसित हुए। इस इकाई में इन नये धार्मिक विचारों के उद्भव और महत्त्व को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

* यह इकाई ई.एच.आई.-02, खंड-4 से ली गई है।

इस इकाई में सबसे पहले, विधर्मिक विचारों के उद्भव तथा फैलाव के लिए उत्तरदायी कारणों को विश्लेषित किया गया है। फिर यह बताया गया है कि बुद्ध तथा महावीर ने किस प्रकार से मानव के दुःख का समाधान खोजने के लिए अपने तरीके से प्रयास किए। क्योंकि दोनों धर्मों के उद्भव के कारणों में समानता है, इसलिये दोनों धर्मों के कुछ सिद्धांत भी समान हैं। परन्तु इनके कुछ मूल सिद्धान्तों में भिन्नता भी है। इन्हीं मुद्दों पर इस इकाई में विवेचन किया गया है।

इस इकाई में लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में उभरे अन्य विधर्मिक विचारों के विषय में भी बताया गया है। अन्त में इस तथ्य का विवेचन किया गया है कि इन नये धार्मिक आंदोलनों का तात्कालिक आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा।

12.2 नये धार्मिक विचारों का उद्भव

नये धार्मिक विचारों का उद्भव उस युग की प्रचलित सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक परिस्थितियों के अंतर्गत निहित था। अब हम उन आधारभूत कारणों का विवेचन करेंगे जिन्होंने इनके उद्भव में भूमिका अदा की।

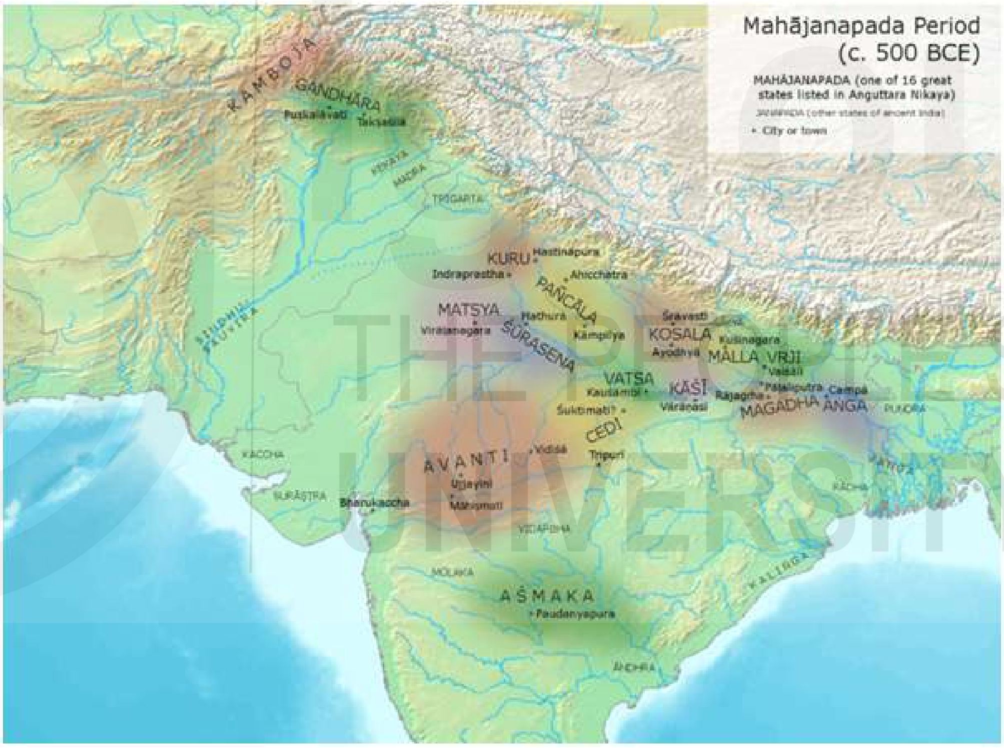

बुद्ध के समय के भारत में प्राचीन राज्य एवं महानगर (लगभग 500 बी.सी.ई.) श्रेयः आवंतिपुरा7 स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स.(https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Mahajanapadas_(c._500_BCE).png)

i) इस काल के नये समाज के संदर्भ में वैदिक धर्म पद्धति जटिल तथा अर्थ-विहीन हो गयी थी। बलि एवं अनुष्ठान अक्सर बड़े पैमाने पर आयोजित किए जाने लगे। बड़े समुदाय के बिखरने के साथ-साथ आयोजनों में लोगों की भागीदारी कम हो गई और समाज के कई समूहों के लिए अर्थहीन हो गई।

ii) बलि-यज्ञों तथा अनुष्ठानों के बढ़ते महत्त्व ने समाज में ब्राह्मण समुदाय के प्रभुत्व को स्थापित किया। वे पुजारी तथा अध्यापक, दोनों का कार्य करते थे और धार्मिक अनुष्ठानों के आयोजन पर अपने एकाधिकार के कारण वे चार *वर्णों* में विभाजित समाज में अपने को सर्वश्रेष्ठ मानते थे।

iii) समकालीन आर्थिक-राजनीतिक परिस्थितियों ने भी नए सामाजिक समुदायों के उद्भव में मदद की। ये समुदाय आर्थिक रूप से सम्पन्न थे। शहर में रहने वाले व्यापारियों तथा अमीर खेतिहर समुदायों के पास प्रचुर सम्पत्ति थी। क्षत्रिय समुदाय, चाहे वे राजतंत्र में हो अथवा गणसंघ में, के हाथ में अब पहले से अधिक राजनीतिक शक्ति थी। ये सामाजिक समुदाय उस सामाजिक व्यवस्था का विरोध कर रहे थे, जो ब्राह्मणों ने वंश के आधार पर निर्धारित की थी। बौद्ध मत तथा जैन मत ने जन्म के आधार पर सामाजिक व्यवस्था की अवधारणा को कोई महत्त्व नहीं दिया जिसके कारण वैश्य इन सम्प्रदायों की ओर आकर्षित हुए। इसी तरह से ब्राह्मणों के प्रभुत्व से क्षत्रिय समुदाय अर्थात् शासक वर्ग भी नाराज़ था। संक्षेप में समाज में ब्राह्मणों की सर्वोच्चता ने असंतोष उत्पन्न किया और इसी ने नवीन धार्मिक विचारों के उदय में सामाजिक सहयोग प्रदान किया। यह ध्यान देने योग्य बात है कि दोनों बुद्ध तथा महावीर क्षत्रिय समुदाय से थे। मगर जटिल सामाजिक समस्याओं से जूझते हुए वे जन्म द्वारा निर्धारित सीमाओं को पार कर गए। जब हम यह जानने की कोशिश करते हैं कि उस समय के समाज में इनके विचार कितने लोकप्रिय हुए तो हम पाते हैं कि राजाओं, बड़े व्यापारियों, अमीर गृहस्थों, ब्राह्मणों तथा वेश्याओं ने भी उनके विचारों के प्रति उत्साह दिखाया। वे सभी उस नए समाज का प्रतिनिधित्व करते थे जो लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में उभर रहा था। तथा बुद्ध, महावीर एवं उस समय के अन्य विचारकों ने अपने-अपने तरीके से एक नई सामाजिक व्यवस्था की समस्याओं का जवाब दिया। इस नई सामाजिक व्यवस्था के लिए वैदिक कर्मकांडी प्रथाओं की प्रासंगिकता समाप्त हो रही थी।

हालांकि प्रचलित धार्मिक सम्प्रदायों की आलोचना करने वालों में बुद्ध एवं महावीर ही पहले नहीं थे। उनसे पहले दूसरे धार्मिक उपदेशकों जैसे कपिल, गोसल, मक्काली, अजिता केशकेबलिन और पकुध कच्चायन ने वैदिक धर्म में सुधार के लिए उसकी बुराइयों को उजागर किया था। उन्होंने भी ईश्वर एवं जीवन के विषय में नवीन चिन्तन प्रस्तुत किए। नये दर्शनों को भी प्रचारित किया गया। परन्तु बुद्ध और महावीर ने नये वैकल्पिक धर्मों की व्यवस्था को प्रस्तुत किया।

यह वह पृष्ठभूमि थी जिसमें लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में नवीन धार्मिक व्यवस्थाओं की उत्पत्ति और स्थापना हुई। इन सभी नवीन धार्मिक सम्प्रदायों में बौद्ध सम्प्रदाय तथा जैन सम्प्रदाय सबसे अधिक लोकप्रिय और अच्छी तरह से संगठित थे।

12.3 भौतिक परिवेश

विद्वानों ने इस तथ्य पर विचार किया है कि उत्तर पूर्वी भारत में बौद्ध और जैन धर्म क्यों उत्पन्न हुए? दोनों ही धर्मों को ब्राह्मणों की बढ़ती कठोरता और कर्मकांड की पुनरावृत्ति के जवाब में एक प्रतिक्रिया के रूप में नहीं समझा जा सकता है। यदि ऐसा होता तो पश्चिमी उत्तर प्रदेश में, जहाँ ब्राह्मणवादी सिद्धांतों का और अधिक बोलबाला था, ऐसे धार्मिक विचार उभर कर सामने आते। आर.एस.शर्मा का मानना है कि इसका उत्तर लोगों के जीवन की भौतिक स्थितियों में निहित है।

1) लोहे की शुरुआत पश्चिमी उत्तर प्रदेश में 1000 बी. सी. ई. तक हो गयी थी और यह धीरे-धीरे पूर्वी यू.पी. में फैल गया। 8वीं से 5वीं शताब्दी बी.सी.ई. के बीच प्रहलादपुर (जिला वाराणसी), चिरदं (बिहार), वैशाली, सोनपुर (गया) आदि स्थानों पर लोहे के उपयोग के साक्ष्य प्राप्त हुए है। 600-300 बी.सी.ई. के बीच पूर्वी यूपी में कृषि के हल,

लोहे की कुल्हाड़ी, हल के फल, व दरांती का आगमन देखा गया। इससे जंगलों की सफाई हुयी और बड़ी बस्तियाँ उभर आई। आर.एस.शर्मा का मानना है कि मौजूदा सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियाँ कृषि के विकास के लिए अनुकूल नहीं थीं। बलि के माध्यम से पश्चिमी यूपी में कुरू और पाचांल की भूमि में मवेशियों की संपत्ति को नष्ट किया जा रहा था। *शतपथ ब्राह्मण* पूर्वी यूपी और बिहार में इसी प्रथा के प्रचलन को दर्शाता है। धर्म द्वारा स्वीकृत होने के बाद, मवेशियों की बलि एक विनाशकारी प्रथा बन गई और कृषि में एक बाधा के रूप में उभर कर आई। बलिदान के दौरान पशुधन किस पैमाने पर नष्ट हो रहा था इसका अनुमान अश्वमेध यज्ञ से होता जहां 600 विभिन्न प्रकार के पशुओं की बलि दी जाती थी। प्रारंभिक पाली ग्रन्थों में कृषि, बुवाई और खेती के बारे में गहन चिंता व्यक्त की गयी है। इस संदर्भ में भगवान बुद्ध की अहिंसा व चोट न पहुंचाने की शिक्षा अहम् बन जाती है। गौतम बुद्ध ने कहा कि पशु बलि से कोई पुण्य प्राप्त नहीं होता। *सुत्तानिपत्त* अहिंसा को सबसे बड़ा गुण मानते थे। बौद्ध धर्म और जैन धर्म दोनों ने ही अहिंसा पर ज़ोर दिया, और यह ऐसे समय में क्रांतिकारी शिक्षा बन गया जब धर्म या भोजन के लिए पशुओं को मार दिया जाता था।

2) इस अवधि में लोहे के प्रयोग से अधिशेष संभव हुआ और अन्य कारकों के साथ इसने शहरी बस्तियों के गठन में मदद की। व्यापार फला-फूला और सेठी जैसे व्यापारी समूहों का उदय हुआ। व्यापार के प्रति ब्राह्मणवादी नज़रिया उत्साहजनक नहीं था। समुद्री यात्रा को निषेध माना जाता था क्योंकि इससे जाति संरचना की शुद्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता था। आरंभिक कानून के अनुसार व्यापार और कृषि की व्यवस्था वैश्यों के लिए थी, जो ब्राह्मणों और क्षत्रियों के लिए निम्न समझे जाते थे। इसके अलावा, ब्राह्मणों के लिए पुरुषों, तरल पदार्थ, चमड़ा, कपड़ा और खाद्यान्न का व्यापार निषिद्ध था। वे संकट के समय कृषि व्यवसाय अपना सकते थे। क्योंकि मगध और अंग के लोग कुछ वस्तुओं का व्यापार करते थे इसलिये उन्हें निम्न समझा जाता था। इसके विपरीत बौद्धों ने समुद्री यात्राओं को स्वीकृति दी। सबसे पहले धर्मान्तरित व्यक्ति बौद्ध धर्म में व्यापारी वर्ग से थे। अनथपिंडिका जैसे धनी व्यापारी संघ को धन दान में देते थे।

3) मुद्रा और मुद्रा के आगमन और उपयोग से सूदखोरी और धन उधार देने की प्रथा का उदय हुआ। मौजूदा सामाजिक विचारधारा ने ब्याज पर पैसे उधार देने का पक्ष नहीं लिया। एक आरंभिक विधि-निर्माता *आपस्तंब* यह निश्चय करता है कि ब्राह्मण को ऐसे व्यक्ति से भोजन स्वीकार नहीं करना चाहिए जो ब्याज वसूलता हो (*वधसिकह*)। दूसरी ओर, पाली ग्रन्थों में ऋणी, लेनदार, ऋण और ब्याज के विभिन्न संदर्भ है। उधार की निंदा नहीं की गयी है। हालांकि ऋण पूर्ण रूप से चुकाने पर ज़ोर था और ऐसा माना जाता था कि इससे व्यक्ति को खुशी प्राप्त होती है।

4) शहरी परिस्थितियों से भोजनालय, वेश्यावृति का उदय हुआ। इन्हें ब्राह्मण ग्रंथों का समर्थन नहीं मिला। *आपस्तम्ब* यह निश्चय करता है कि ब्राह्मणों को दुकानों में तैयार भोजन नहीं खाना चाहिए। लेकिन बौद्ध ग्रन्थ इस तरह का रवैया नहीं पेश करते। प्रारंभिक पाली ग्रन्थ शहरों में रहने वाली वेश्याओं का उल्लेख करते हैं। आम्रपाली एक प्रसिद्ध गणिका थी जो एक रात के लिए 50 काहपण लेती थी। ब्राह्मण ग्रन्थों ने वेश्यावृति को मंजूरी नहीं दी। *बौधायान* के अनुसार वेश्या या व्याभिचारी महिला द्वारा दिया जाने वाला भोजन निषिद्ध है। इसके विपरीत बुद्ध ऐसे किसी निषेधाज्ञा पर विश्वास नहीं करते थे। बौद्ध संघ में महिलाओं के प्रवेश पर कोई रोक नहीं थी और संघ में शामिल होने पर वेश्याओं पर कोई प्रतिबंध नहीं था।

5) समाज के नए स्वरूप में जिसमें लोहे, बड़ी बस्तियों, धन के नए रूपों व वीरता का महत्व था, क्षत्रियों की उत्पत्ति एक शक्तिशाली योद्धाओं के रूप में हुयी। उनकी शक्तिशाली स्थिति ने उन्हें ब्राह्मणों के साथ सीधे प्रतिस्पर्धा में ला दिया, जिन्हें हमेशा सामाजिक पदानुक्रम में सबसे सर्वोच्च होने का श्रेय था। बुद्ध और महावीर दानों क्षत्रिय वर्ग से थे। बौद्धों ने क्षत्रियों को पहला स्थान दिया। उनका मानना था कि क्षत्रिय खेतों की रक्षा करते हैं और इस तरह करों के रूप में पैदा होने वाले किसानों के एक हिस्से पर उनका अधिकार है।

इस तरह बौद्ध धर्म की उत्पत्ति छठी शताब्दी बी.सी.ई. के भौतिक परिवेश के कारण हुयी। इसने उन धार्मिक प्रथाओं को जो कृषि के विकास में बाधा बनती थी, नकार दिया। यह पूरी तरह से नए वियोज्य वर्ग आधारित और राज्य आधारित संरचना के अनुकूल था जो लोहे के दूसरे चरण का उत्पाद था।

12.4 गौतम बुद्ध और बौद्ध धर्म की उत्पत्ति

बौद्ध मत की स्थापना गौतम बुद्ध ने की थी। उनके माता-पिता ने उनका नाम सिद्धार्थ रखा था। और उनके पिता शुद्धोधन शाक्य गण के मुखिया थे तथा उनकी माँ का नाम माया था जो कोलिया गण की राजकुमारी थीं। उनका जन्म नेपाल की तराई में स्थित लुम्बिनी (आधुनिक रुमिन्डै) नामक स्थान पर हुआ था। यह जानकारी हमें अशोक के एक स्तम्भ लेख के द्वारा मिलती है। बुद्ध की वास्तविक जन्म तिथि वाद-विवाद का विषय है परन्तु अधिकतर विद्वानों द्वारा इसको लगभग 566 बी.सी.ई. माना गया है।

यद्यपि उनका जीवन शाही ठाठ-बाट में व्यतीत हो रहा था, लेकिन यह गौतम के मस्तिष्क को आकर्षित करने में असफल रहा। पारम्परिक स्रोतों के अनुसार एक बूढ़े आदमी, एक बीमार व्यक्ति, एक मृत शरीर तथा एक संन्यासी को देखकर उन्हें बहुत दुःख हुआ। मानव जीवन के दुखों ने गौतम पर गहरा प्रभाव डाला। मानवता को दुखों से मुक्त कराने की खोज में उन्होंने 29 वर्ष की आयु में अपने घर, पत्नी तथा बेटे का परित्याग कर दिया। गौतम ने संन्यासी की भांति घूम-घूमकर छः वर्ष व्यतीत किए। उन्होंने वैशाली के अलारा कालमा से ध्यान करने और *उपनिषदों* की शिक्षा प्राप्त की। परन्तु उनकी यह शिक्षा गौतम को अन्तिम मुक्ति के लिए राह न दिखा सकी, तो उन्होंने पांच ब्राह्मण संन्यासियों के साथ उनका भी परित्याग कर दिया।

चित्र 12.1 : बुद्ध का महलों के जीवन से ''महान प्रस्थान''. गांधार. 1-2 सी.ई. गुइमेट संग्राहलय. (बुद्ध एक प्रभामंडल से घिरे है, जिसमें कई रक्षक, मिथुन प्रेमी जोड़े और देवता हैं जो श्रद्धांजलि देने आए है). स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Great_Departure.JPG)

बुद्ध ने कठोर संयम को अपनाया और सत्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न कठोर यातनाएँ सहन कीं। अंततः इन सबका त्याग करके वे उरूवेला (आधुनिक बोधगया के पास निरंजना नदी के किनारे) गये और एक पीपल के वृक्ष (बौद्ध वृक्ष) के नीचे ध्यान मग्न हो गये। यहाँ अपनी ध्यान अवस्था के उनचासवें दिन उन्हें ''सर्वोच्च ज्ञान'' की प्राप्ति हुई। तब से उनको ''बुद्ध'' (ज्ञानी पुरुष) या ''तथागत्'' (वह जो सत्य को प्राप्त करे) कहा जाने लगा। यहाँ से प्रस्थान करके वे वाराणसी के पास सारनाथ में एक हिरन उद्यान पहुँचे जहाँ पर उन्होंने अपना पहला धर्मोपदेश दिया जिसको ''*धर्मचक्र प्रवर्तन*'' (धर्म के चक्र को घुमाना) के नाम से जाना जाता है। अश्वजित, उपालि, मोगल्लान, सारिपुत्र और आनन्द – ये बुद्ध के पहले पांच शिष्य थे। बुद्ध ने बौद्ध संघ का सूत्रपात किया। उन्होंने अपने अधिकतर धर्मोपदेश श्रावस्ती में दिए। श्रावस्ती का धनी व्यापारी अनथपिण्डिक उनका शिष्य हुआ और उसने बौद्ध मत के लिए उदार दान दिया।

चित्र 12.2 : बुद्ध उपदेश देते हुए (धर्मचक्र मुद्रा) गुप्त काल, बलुआ पत्थर, ऊंचाई - 160 सेंटीमीटर। आर्कोयोलोजिकल म्यूज़ियम (ए एस आई), सारनाथ. श्रेयः तेराप्रपस। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Buddha_in_Sarnath_Museum_(Dhammajak_Mutra).jpg)

जल्द ही उन्होंने अपने धर्म प्रवचन के प्रचार के लिए बहुत से स्थानों का भ्रमण करना शुरू कर दिया। वे सारनाथ, मथुरा, राजगीर, गया और पाटलिपुत्र गये। बिम्बिसार, अजातशत्रु (मगध), प्रसेनजीत (कोसल) और उदयन (कौशाम्बी) के राजाओं ने उनके सिद्धान्तों को स्वीकार किया तथा वे उनके शिष्य बन गये। वह कपिलवस्तु भी गये और उन्होंने अपनी धाय माता व बेटे राहुल को भी अपने सम्प्रदाय में परिवर्तित किया।

मल्ल गणों की राजधानी कुशीनगर (उत्तर प्रदेश के देवरिया जिले में स्थित कसिया) में 80 वर्ष की आयु में (486 बी.सी.ई.) बुद्ध की मृत्यु हो गई (चित्र 12.3)।

चित्र 12.3 : बुद्ध का महापरिनिर्वाण। गांधार, 2-3 शताब्दी। श्रेयः पी एच जी। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Paranirvana.JPG)

आइए अब बुद्ध की उन शिक्षाओं का विवेचन करें जो लोकप्रिय हुईं और जिन्होंने उस समय के धार्मिक विचारों को नवीन दिशा प्रदान की।

बुद्ध के उपदेश

बुद्ध के मूलभूत उपदेश निम्नलिखित में संकलित हैं :

क) *चार आर्य सत्य,* और

ख) *अष्टांगिक मार्ग*

क) निम्नलिखित *चार आर्य सत्य* हैं :

- i) संसार दुःखों से परिपूर्ण है।
- ii) सारे दुःखों का कोई न कोई कारण है। इच्छा, अज्ञान और मोह मुख्यतः दुःख के कारण हैं।
- iii) इच्छाओं का अन्त मुक्ति का मार्ग है।
- iv) मुक्ति (दुःखों से छुटकारा पाना) *अष्टांगिक मार्ग* द्वारा प्राप्त की जा सकती है।

ख) *अष्टांगिक मार्ग* में निम्नलिखित सिद्धांत समाहित हैं :

- i) *सम्यक् दृष्टि :* इसका अर्थ है कि इच्छा के कारण ही इस संसार में दुःख व्याप्त है। इच्छा का परित्याग ही मुक्ति का मार्ग है।
- ii) *सम्यक् संकल्प :* यह लिप्सा और विलासिता से छुटकारा दिलाता है। इसका उद्देश्य मानवता को प्रेम करना और दूसरों को प्रसन्न रखना है।
- iii) *सम्यक् वाचन :* अर्थात् सदैव सच बोलना।
- iv) *सम्यक् कर्म :* इसका तात्पर्य है स्वार्थरहित कार्य करना।

v) *सम्यक् जीविका :* अर्थात् व्यक्ति को ईमानदारी से अर्जित साधनों द्वारा जीवन-यापन करना चाहिए।

vi) *सम्यक् प्रयास :* इससे तात्पर्य है कि किसी को भी बुरे विचारों से छुटकारा पाने के लिए इन्द्रियों पर नियंत्रण होना चाहिए। कोई भी मानसिक अभ्यास के द्वारा अपनी इच्छाओं एवं मोह को नष्ट कर सकता है।

vii) *सम्यक् स्मृति :* इसका अर्थ है कि शरीर नश्वर है और सत्य का ध्यान करने से ही सांसारिक बुराइयों से छुटकारा पाया जा सकता है।

vii) *सम्यक् समाधि :* इसका अनुसरण करने से शान्ति प्राप्त होगी। ध्यान से ही वास्तविक सत्य प्राप्त किया जा सकता है।

बौद्ध मत ने *कर्म* के सिद्धान्त पर बल दिया, जिसके अनुसार वर्तमान का निर्णय भूतकाल के कार्य करते हैं। किसी व्यक्ति की इस जीवन और अगले जीवन की दशा उसके कर्मों पर निर्भर करती है।

प्रत्येक व्यक्ति स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है। अपने कर्मों को भोगने के लिए हम बार-बार जन्म लेते हैं। अगर कोई व्यक्ति किसी भी तरह का पाप नहीं करता है तो उसका पुनर्जन्म नहीं होगा। इस प्रकार बुद्ध के उपदेशों का अनिवार्य तत्व या सार *''कर्म-दर्शन'* है।

बुद्ध ने *निर्वाण* का प्रचार किया। उनके अनुसार यही प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का अंतिम उद्देश्य है। इसका तात्पर्य है सभी इच्छाओं से छुटकारा, दुःखों का अन्त जिससे अन्ततः पुनर्जन्म से मुक्ति मिलती है। इच्छाओं की समाप्ति की प्रक्रिया के द्वारा कोई भी *निर्वाण* पा सकता है। इसलिए बुद्ध ने उपदेश दिया कि इच्छा ही वास्तविक समस्या है। पूजा और बलि इच्छा को समाप्त नहीं कर सकेंगे। इस प्रकार वैदिक धर्म में होने वाले अनुष्ठानों एवं यज्ञों के विपरीत बुद्ध ने व्यक्तिगत नैतिकता पर बल दिया।

बुद्ध ने न ईश्वर के अस्तित्व को स्वीकारा और न ही नकारा। यह व्यक्ति और उसके कार्यों के विषय में अधिक चिन्तित थे। बौद्ध मत ने आत्मा के अस्तित्व को भी स्वीकार नहीं किया।

इनके अतिरिक्त बुद्ध ने अन्य पक्षों पर भी बल दिया :

- बुद्ध ने प्रेम की भावना पर बल दिया। *अहिंसा* का अनुसरण करके प्रेम को सभी प्राणियों पर अभिव्यक्त किया जा सकता है। यद्यपि *अहिंसा* के सिद्धांत को बौद्ध मत में अच्छी तरह से समझाया गया था, परन्तु इसको इतना महत्त्व नहीं दिया गया जितना कि जैन मत में।
- व्यक्ति को मध्य मार्ग का अनुसरण करना चाहिए। कठोर संन्यास एवं विलासी जीवन दोनों से बचना चाहिए।

बौद्ध धर्म का थोड़े ही समय में एक संगठित धर्म के रूप में उद्भव हुआ और बुद्ध के उपदेशों को संग्रहीत किया गया। बौद्ध धर्म के इस संग्रहीत साहित्य (उपदेशों का संग्रह-पिटक) को तीन भागों में बांटा गया है :

i) *सुत्त-पिटक* में पांच *निकाय* हैं जिनमें धार्मिक सम्भाषण तथा बुद्ध के संवाद संकलित हैं। पांचवें *निकाय* में *जातक* कथायें (बुद्ध के पूर्व जन्मों से सम्बद्ध कहानियाँ) हैं।

ii) *विनय पिटक* में भिक्षुओं के अनुशासन से संबंधित नियम हैं।

iii) *अभिधम्म-पिटक* में बुद्ध के दार्शनिक विचारों का विवरण है। इन्हें प्रश्न-उत्तर के रूप में लिखा गया है।

12.4.1 बौद्ध मत का विकास

अब हम उन कारणों पर प्रकाश डालेंगे जिन्होंने बौद्ध मत के विकास में योगदान दिया और उसको एक लोकप्रिय धर्म बनाया।

बौद्ध मत का विस्तार

इसके संस्थापक के जीवन काल में ही बड़ी संख्या में लोगों ने बौद्ध मत को स्वीकार कर लिया था। उदाहरण के लिए मगध, कोसल और कौशाम्बी की जनता ने बौद्ध मत को स्वीकार किया। शाक्य, वज्जि और मल्ल *जनपदों* की जनता ने भी इसका अनुसरण किया। अशोक एवं कनिष्क ने बौद्ध मत को राज्य धर्म बनाया और यह मध्य एशिया, पश्चिम एशिया और श्रीलंका में भी फैला। बौद्ध मत जनता के बड़े हिस्सों में लोकप्रिय होने के निम्नलिखित कारण थे :

चित्र 12.4 : अशोक के रूम्मिनडै लघु स्तम्भ लेख (250 बी.सी.ई.) पर ब्राह्मी लिपि में बु-धा (बुद्ध) और ''सा-क्या-मु-नी'' (शाक्यों का ऋषि) शब्द। श्रेयः पेनांग मलेशिया से धर्मा। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स https://commons.wikimedia.org/w/index.php?curid=72611830

- व्यावहारिक नैतिकता पर बल देना, मानव जाति की समस्याओं का सहज स्वीकृत समाधान और साधारण दर्शन ने जनता को बौद्ध मत की ओर आकर्षित किया।
- बौद्ध धर्म में संकलित सामाजिक समानता के विचारों के कारण साधारण जनता ने बौद्ध मत को स्वीकार किया।
- अनथपिण्डिक जैसे व्यापारी और आम्रपाली जैसी गणिका ने इस मत को स्वीकार किया क्योंकि उन्होंने इस धर्म में उचित सम्मान प्राप्त किया।
- विचारों को व्यक्त करने के लिए लोकप्रिय भाषा पाली के प्रयोग ने भी धर्म के विस्तार में मदद दी। संस्कृत का प्रयोग करने के कारण ब्राह्मण धर्म सीमा में बंध गया था क्योंकि यह जन-भाषा नहीं थी।
- राजाओं के द्वारा संरक्षण प्रदान किये जाने के कारण बौद्ध धर्म का विस्तार तेजी के साथ हुआ। उदाहरण के लिए, ऐसी धारणा है कि अशोक ने अपने पुत्र महेन्द्र तथा पुत्री संघमित्रा को श्रीलंका में बौद्ध धर्म का प्रचार करने के लिए भेजा। उसने बहुत से बौद्ध विहारों को स्थापित किया और *संघ* के लिए उदार भाव से दान आदि भी दिया।
- बौद्ध मत को प्रभावशाली ढंग से फैलाने में *संघ* की संस्था ने संगठित रूप से योगदान दिया।

संघ बौद्ध मत की धार्मिक अवस्था थी। यह एक अच्छे प्रकार से संगठित एवं शक्तिशाली संस्था थी और इसने बौद्ध को लोकप्रिय बनाया। 15 वर्ष से अधिक की आयु वाले सभी नागरिकों के लिए इसकी सदस्यता खुली थी चाहे वे किसी भी जाति के हों। किन्तु अपराधी, कुष्ठ रोगी तथा संक्रामक रोग से पीड़ित लोगों को *संघ* की सदस्यता नहीं दी जाती थी।

प्रारम्भ में गौतम बुद्ध महिलाओं को *संघ* का सदस्य बनाने के पक्ष में नही थे। लेकिन उनके मुख्य शिष्य आनन्द एवं उनकी धाय माँ महाप्रजापति गौतमी के लगातार निवेदन करने पर उन्होंने उनको *संघ* में प्रवेश दिया।

भिक्षुओं को प्रवेश लेने पर विधिपूर्वक अपना मुंडन कराना एवं पीले या गेरुए रंग का लिबास पहनना पड़ता था। उनसे आशा की जाती थी कि वे नित्य बौद्ध मत के प्रचार के लिए जायेंगे और भिक्षा प्राप्त करेंगे। वर्षा ऋतु के चार महीनों के दौरान वे एक निश्चित निवास स्थान बनाते थे और ध्यान करते थे। इसको आश्रय या *वास* कहा जाता था। *संघ* लोगों को शिक्षा देने का भी काम करता था। ब्राह्मणवाद के विपरीत बौद्ध मत में समाज के सभी लोग शिक्षा ग्रहण कर सकते थे। स्वाभाविक रूप से जिन लोगों को ब्राह्मणों ने शिक्षा प्राप्त करने के अधिकार से वंचित कर दिया था उनको बौद्ध मत में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त हो गया और इस प्रकार शिक्षा समाज के काफ़ी तबकों में फैल गईं।

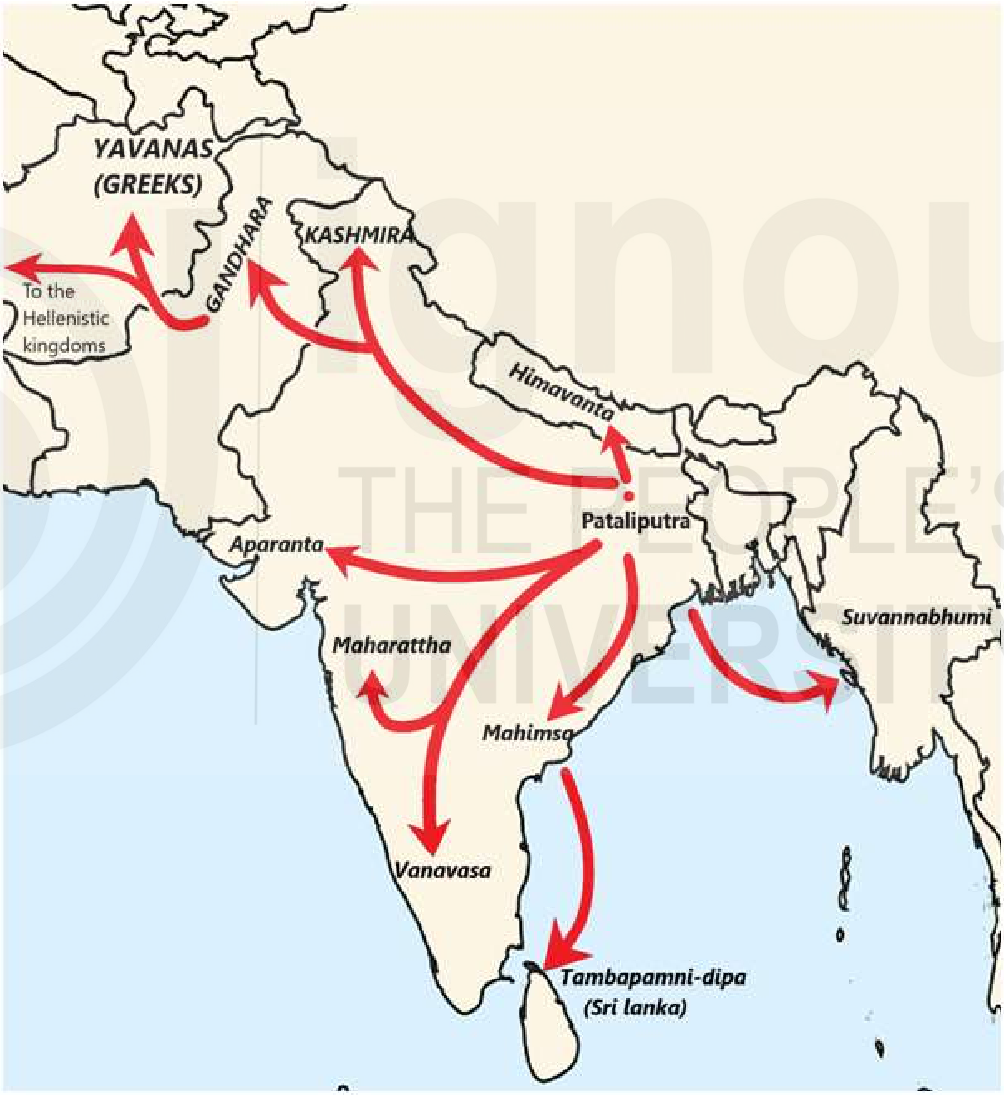

अशोक के शासनकाल के दौरान बौद्ध धर्म-प्रचार मिशनों का मानचित्र। श्रेयः ज़ेवियर एफवी 1212. स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Asoka%CC%A0_Buddhist_Missions.png)

संघ का संचालन जनतांत्रिक सिद्धान्तों के अनुसार होता था और अपने सदस्यों को अनुशासित करने की शक्ति भी इसी में निहित थी। यहाँ पर भिक्षुओं एवं भिक्षुणियों के लिए एक आचार-संहिता थी और वे इसका पालन करते थे। गलती करने वाले सदस्य को *संघ* दण्डित कर सकता था।

बौद्ध मत की सभायें

अनुश्रुतियों के अनुसार बुद्ध की मृत्यु के कुछ समय बाद 483 बी.सी.ई. में राजगृह के पास सप्तपर्णि गुफा में बौद्ध मत की प्रथम सभा हुई। इस सभा की अध्यक्षता, महाकस्यप ने की। बुद्ध की शिक्षा को *पिटकों* में विभाजित किया गया, जिनके नाम इस प्रकार हैं :

क) *विनय-पिटक,* और

ख) *सुत्त-पिटक*

विनय-पिटक की रचना उपाली के नेतृत्व में की गई और *सुत्त-पिटक* की रचना आनन्द के नेतृत्व में की गई।

दूसरी सभा का आयोजन 393 बी.सी.ई. में वैशाली में हुआ। पाटलीपुत्र तथा वैशाली के भिक्षुओं ने कुछ नियमों को धारण किया परन्तु इन नियमों की कौशाम्बी व अवन्ति के भिक्षुओं के द्वारा बुद्ध की शिक्षा के प्रतिकूल घोषित कर दिया गया। दोनों विरोधी गुटों के बीच कोई भी समझौता कराने में सभा असफल रही। बौद्ध धर्म का विभाजन स्थायी तौर पर दो बौद्ध सम्प्रदायों–*स्थविरावादी* व *महासंघिक* में हुआ। पहले सम्प्रदाय ने *विनय-पिटक* में वर्णित रूढ़िवादी विचारों को अपनाया और दूसरे ने नये नियमों का समर्थन किया और फिर उनमें परिवर्तन किए।

चित्र 12.5 : राजगीर (बिहार) की सत्तपन्नी गुफाएँ जहाँ प्रथम बौद्ध सभा आयोजित हुयी। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sattapanni.jpg)

तीसरी सभा का आयोजन अशोक के शासनकाल में मोग्गालिपुत तिस्स की अध्यक्षता में पाटलिपुत्र में किया गया। इस सभा में सिद्धान्तों की दार्शनिक विवेचना को संकलित किया गया तथा इसको *अभिधम्म-पिटक* के नाम से जाना जाता है। इस सभा में बौद्धमत को असंतुष्टों एवं नये परिवर्तनों से मुक्त कराने का प्रयोग किया गया। 60,000 ''पथभ्रष्ट'' भिक्षुओं को बौद्ध मत से इस सभा द्वारा निष्कासित कर दिया गया। सत्य उपदेशों के साहित्य को परिभाषित किया गया तथा आधिकारिक तौर पर विघ्न पैदा करने वाली प्रवृत्तियों से भी निपटा गया।

चौथी सभा का आयोजन कश्मीर में कनिष्क के शासन काल में हुआ। इस सभा में उत्तरी भारत के *हीनयान* सम्प्रदाय को मानने वाले एकत्रित हुए। तीन *पिटकों* पर तीन टीकाओं (भाष्यों) का संकलन इस सभा द्वारा किया गया। इसने उन विवादग्रस्त मतभेद वाले प्रश्नों का निपटारा किया जो सरवस्तीवाद एवं कश्मीर तथा गन्धार के प्रचारकों के मध्य उत्पन्न हो गये थे।

बौद्ध धर्म के सम्प्रदाय

वैशाली में आयोजित दूसरी सभा में, बौद्ध धर्म का निम्न दो सम्प्रदायों में विभाजन हुआः

क) *स्थविरावादी*

ख) *महासंघिक*

स्थविरावादी धीरे-धीरे ग्यारह सम्प्रदायों और *महासंघिक* सात सम्प्रदायों में बंट गये थे।

अठ्ठारह सम्प्रदाय *हीनयान* मत में संगठित हुए। *स्थविरवादी* कठोर भिक्षुक जीवन और मूल निर्देशित कड़े अनुशासित नियमों का अनुसरण करते थे। वह समूह जिसने संशोधित नियमों को माना, वह *महासंघिक* कहलाया।

महायान सम्प्रदाय का विकास चौथी बौद्ध सभा के बाद हुआ। *हीनयान* सम्प्रदाय, जो बुद्ध की रूढ़िवादी शिक्षा में विश्वास करता था, इनका जिस गुट ने विरोध किया और जिन्होंने नये विचारों को स्वीकार किया, वे लोग *महायान* सम्प्रदाय के समर्थक कहलाये। उन्होंने बुद्ध की प्रतिमा बनायी और ईश्वर की भांति उसकी पूजा की। लगभग प्रथम सदी सी.ई. में कनिष्क के शासन काल के दौरान कुछ सैद्धांतिक परिवर्तन किए गए।

बोध प्रश्न 1

1) छठी शताब्दी बी.सी.ई. में नए धार्मिक विचारों को जन्म देने वाली भौतिक परिस्थितियाँ क्या थीं?

....

....

....

....

....

2) बौद्ध धर्म की मुख्य विशेषतायें क्या हैं?

....

....

....

....

....

12.5 जैन धर्म की उत्पत्ति

जैन श्रुतियों के अनुसार, जैन धर्म की उत्पत्ति एवं विकास के लिए 24 तीर्थांकर उत्तरदायी थे। इनमें से पहली बाईस की ऐतिहासिकता संदिग्ध है। परन्तु अन्तिम तीर्थांकर पार्श्वनाथ और महावीर की ऐतिहासिकता को बौद्ध ग्रंथों ने भी प्रमाणित किया है।

पार्श्वनाथ

जैन श्रुतियों के अनुसार 23वें तीर्थांकर पार्श्वनाथ बनारस के राजा अश्वसेन एवं रानी वामा के पुत्र थे। उन्होंने 30 वर्ष की आयु में सिंहासन का परित्याग कर दिया और वे संन्यासी हो गए। 84 दिन की तपस्या के उपरान्त उनको **ज्ञान** की प्राप्ति हुई। उनकी मृत्यु महावीर से लगभग 250 वर्ष पहले सौ वर्ष की आयु में हुई। वह ''पदार्थ'' की अनन्ता में विश्वास करते थे। वह अपने पीछे अपने समर्थकों की काफ़ी बड़ी संख्या छोड़ गए। उनके शिष्य सफेद वस्त्रों को धारण करते थे। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि महावीर से पूर्व भी किसी न किसी रूप में जैन धर्म का अस्तित्व था।

महावीर

चित्र 12.6 : पार्श्वनाथ जिन. मध्य प्रदेश, 600-700 सी.ई. श्रेयः सैल्को। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स। (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:India,_madhya_pradesh,_jina_parshvanatha_dalla_temp%C3%A8esta,_600-700.JPG)

24वें तीर्थांकर वर्धमान महावीर थे। उनका जन्म कुण्डग्राम (वासुकुण्ड), वैशाली के पास (जिला मुजफ्फरपुर, बिहार) 540 बी.सी.ई. में हुआ था। उनके पिता सिद्धार्थ जान्त्रिक क्षत्रिय गण के मुखिया थे। उनकी माता लिच्छिवी राजकुमारी थी, जिनका नाम त्रिशाला था। वर्धमान ने अच्छी शिक्षा प्राप्त की और उनका विवाह यशोदा के साथ हुआ। उससे उन्हें एक पुत्री थी। 30 वर्ष की आयु में महावीर ने अपने घर का परित्याग किया और वह संन्यासी हो गये। पहले उन्होंने एक वस्त्र धारण किया और फिर उसका भी 13 मास के उपरान्त परित्याग कर दिया तथा बाद में वे ''नग्न भिक्षु'' की भांति भ्रमण करने लगे। घोर तपस्या करते हुए 12 वर्ष तक उन्होंने एक संन्यासी का जीवन व्यतीत किया। अपनी तपस्या के 13वें वर्ष में 42 वर्ष की आयु में उनको ''सर्वोच्च ज्ञान'' (केवलिन्) की प्राप्ति हुई। बाद में उनकी प्रसिद्धि ''महावीर (सर्वोच्च योद्धा)'' या *जिन* (विजयी) के नामों से हुई। उनको *निर्ग्रंथ* (बन्धनों से मुक्त) के नाम से भी जाना जाता था।

अगले 30 वर्षों तक वह एक स्थान से दूसरे स्थान पर भ्रमण करते रहे और कोसल, मगध तथा अन्य पूर्वी क्षेत्रों में अपने विचारों का प्रचार किया। वह एक वर्ष में आठ माह विचरण करते थे और वर्षा ऋतु के चार माह पूर्वी भारत के किसी प्रसिद्ध नगर में व्यतीत करते। वह अक्सर बिम्बिसार तथा अजातशत्रु के दरबारों में भी जाते थे। उनकी मृत्यु 72 वर्ष की आयु में पटना के समीप पावा नामक स्थान पर 486 बी.सी.ई. में हुई।

चित्र 12.7 : महावीर, 24वां तीर्थांकर, वर्तमान समय के चक्र में। श्रेयः दयोदय। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स। (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Mahavir.jpg)

12.5.1 महावीर के उपदेश

महावीर ने पार्श्वनाथ द्वारा प्रतिपादित किए गए धार्मिक विचारों को ही अधिकतर स्वीकार किया। तथापि उन्होंने उनमें कुछ संशोधन किया और कुछ जोड़ा।

पार्श्वनाथ ने निम्नलिखित चार सिद्धांतों का प्रचार किया था :

क) सत्य

ख) अहिंसा

ग) किसी प्रकार की कोई सम्पत्ति न रखना,

घ) स्वेच्छा से नहीं दी गई किसी भी वस्तु को ग्रहण न करना।

इसी में महावीर ने 'ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना' भी जोड़ दिया। उनका विश्वास था कि आत्मा (*जीव*) व पदार्थ (*अजीव*) अस्तित्व के दो मूलभूत तत्व हैं। जिनके अनुसार पूर्व जन्मों की इच्छाओं के कारण आत्मा दासत्व की स्थिति में है। लगातार प्रयासों के माध्यम से आत्मा को मुक्ति प्राप्त हो सकती है। यही आत्मा की अन्तिम मुक्ति (*मोक्ष*) है। मुक्त आत्मा फिर ''पवित्र/शुद्ध आत्मा'' बन जाती है।

जैन धर्म के अनुसार मानव अपने भाग्य का स्वयं रचयिता है और वह पवित्र, सदाचारी एवं आत्म-त्यागी जीवन का अनुसरण करके ही *मोक्ष* को प्राप्त कर सकता है। निम्नलिखित तीन सिद्धान्तों (तीन गुणव्रत) का अनुसरण करके *मोक्ष (निर्वाण)* प्राप्त किया जा सकता है :

i) उचित विश्वास

ii) उचित ज्ञान, और

iii) उचित कार्य

निर्वाण अर्थात् आध्यात्मिकता की सर्वोच्च स्थिति को प्राप्त करने के लिए उन्होंने घोर वैराग्य और कठोर तपस्या पर ज़ोर दिया। उनका विश्वास था कि सृष्टि की रचना किसी सर्वोच्च शक्ति के द्वारा नहीं की गयी। उत्थान-पतन के अनादि नियमों के अनुसार सृष्टि कार्य करती है। उनका विचार था कि सभी चेतन या अवचेतन वस्तुओं में आत्मा का वास है। उनका विश्वास था कि वे सभी पीड़ा अथवा चोट के प्रभाव को महसूस करते हैं।

उन्होंने *वेदों* के प्रभुत्व का तिरस्कार किया और वैदिक अनुष्ठानों तथा ब्राह्मणों की सर्वोच्चता का भी विरोध किया। गृहस्थों एवं भिक्षुओं, दोनों के लिए आचार-संहिता को अनुसरणीय बताया। बुरे कर्मों से बचने के लिए एक गृहस्थ को निम्नलिखित पांच व्रतों का पालन करना चाहिए :

i) अंहिसा,

ii) चोरी न करना,

iii) व्याभिचार से बचना

iv) सत्य वचन, और

v) आवश्यकता से अधिक धन संग्रह न करना।

उन्होंने यह निर्देशित किया कि प्रत्येक गृहस्थ को ज़रूरतमंदों को प्रत्येक दिन पका हुआ भोजन खिलाना चाहिए। उन्होंने प्रचारित किया कि उनके अनुयायियों को कृषि कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि इस कार्य में पेड़-पौधे एवं जन्तुओं का विनाश हो जाता है। एक भिक्षु को कठोर नियमों का पालन करना पड़ता था। उसको सभी सांसारिक चीजों का परित्याग करना होता था। उसको अपने सिर के प्रत्येक बाल को अपने हाथों से उखाड़ना होता था। वह केवल दिन के समय ही चल सकता था जिससे कि किसी भी प्रकार जीव हत्या न हो या उनको कोई भी हानि पहुँचे। उनको स्वयं को इस प्रकार से प्रशिक्षित करना होता था कि वे अपनी ज्ञानेन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण कर सकें।

जैन धर्म का विश्वास था कि *मोक्ष* प्राप्ति के लिए एक भिक्षु का जीवन अनिवार्य था। और एक गृहस्थ इसको प्राप्त नहीं कर सकता था।

अनुश्रुतियों के अनुसार महावीर द्वारा शिक्षित किए गए मूल सिद्धान्तों को 14 ग्रंथों में संकलित किया गया था, जिनको *पूर्व* के नाम से जाना जाता है। पाटलिपुत्र के प्रथम सभा में स्थूलभद्र ने जैन धर्म को 12 *अंगों* में विभाजित किया, इनको *श्वेताम्बर* सम्प्रदाय ने स्वीकार किया। परन्तु *दिगम्बर* सम्प्रदाय के लोगों ने यह कहकर इसे मानने से इंकार कर दिया कि सभी पुराने धर्म ग्रंथ खो चुके हैं। दूसरी सभा का आयोजन वल्लभि में हुआ और इसमें *उपंगों* के नाम से नयी श्रुतियों को जोड़ा गया। 12 *अंगों* में *आचारंग सूत्र* और *भगवती सूत्र* सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। पहले में उन नियमों का वर्णन है जिनका जैन भिक्षुओं को अनुसरण करना चाहिए, दूसरे में जैन धर्म के सिद्धान्तों का व्यापक रूप से वर्णन किया गया है।

12.5.2 जैन धर्म का विकास

महावीर की शिक्षाएँ जनता के बीच बड़ी लोकप्रिय हुई और समाज के विभिन्न तबके इसकी ओर आकर्षित हुए। बौद्ध धर्म की भांति जैन धर्म में भी समय-समय पर परिवर्तन होते रहे। अब हम देखेंगे कि इस धर्म के विस्तार में किन कारकों ने योगदान दिया और क्या विकास हुए?

जैन धर्म का विस्तार

महावीर के 11 शिष्य थे जिनको *गणधर* अर्थात् सम्प्रदायों का प्रमुख कहा जाता था। आर्य सुधर्मा अकेला ऐसा *गणधर* था जो महावीर की मृत्यु के पश्चात् भी जीवित रहा और जो जैन धर्म का प्रथम *थेरा* अर्थात् उपदेशक हुआ। उसकी मृत्यु महावीर की मृत्यु के 20 वर्ष पश्चात् हुई। राजा नन्द के काल में जैन धर्म के संचालन का कार्य दो *थेरों* (आचार्यों) द्वारा किया गया था:

i) सम्भूताविजय, और

ii) भद्रबाहु

छठे *थेरा* (आचार्य) भद्रबाहु मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के समकालीन थे।

धीरे-धीरे महावीर के समर्थक संपूर्ण क्षेत्र में फैल गए। जैन धर्म को शाही संरक्षण की कृपा भी रही। जैन अनुश्रुतियों के अनुसार अजातशत्रु का उत्तराधिकारी उदयन जैन धर्म का अनुयायी था। सिकन्दर के भारत पर आक्रमण के समय जैन भिक्षुओं को सिन्धु नदी के किनारे पाया गया था। चन्द्रगुप्त मौर्य जैन धर्म का अनुयायी था और उसने भद्रबाहु के साथ दक्षिण की ओर प्रवास किया तथा जैन धर्म का प्रचार किया। पहली सदी सी.ई. में मथुरा एवं उज्जैन जैन धर्म के प्रभाव केंद्र बने।

बौद्ध धर्म की तुलना में जैन धर्म की सफलता शानदार थी। इसकी सफलता का एक मुख्य कारण था कि महावीर एवं उसके अनुयायियों ने संस्कृत के स्थान पर लोकप्रिय प्राकृत का प्रयोग किया। जैन धार्मिक साहित्य को अर्धमगधी में भी लिखा गया। जनता के लिए सरल एवं घरेलू निर्देशों ने लोगों को आकर्षित किया। जैन धर्म को राजाओं के द्वारा संरक्षण दिये जाने के कारण भी लोगों के मस्तिष्क में इसका स्थान बना।

जैन सभायें

चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन की समाप्ति के समीप दक्षिण बिहार में भयंकर अकाल पड़ा। यह 12 वर्षों तक चला। भद्रबाहु और उनके शिष्यों ने कर्नाटक राज्य में श्रवणबेलगोल की ओर विस्थापन किया। अन्य जैन मुनि स्थूलभद्र के नेतृत्व में मगध में ही रह गए। उन्होंने पाटलिपुत्र में 300 बी.सी.ई के आस-पास सभा का आयोजन किया जिसमें इस सभा में महावीर की पवित्र शिक्षाओं को 12 *अंगो* में विभाजित किया गया।

दूसरी जैन सभा का आयोजन 512 सी.ई. में गुजरात में वल्लभी नामक स्थान पर देवर्धि क्षेमासरमण की अध्यक्षता में किया गया। इसका मुख्य उद्देश्य पवित्र ग्रंथों को एकत्र एवं उनको पुनः क्रम से संकलित करना था। किन्तु प्रथम सभा में संकलित बारहवां *अंग* इस समय खो गया था। शेष बचे हुए *अंगों* को अर्धमगधी में लिखा गया।

सम्प्रदाय

जैन धर्म में फूट पड़ने का समय लगभग 300 बी.सी.ई. माना जाता है। महावीर के समय में ही एक वस्त्र धारण करने को लेकर मतभेद स्पष्ट होने लगे थे। श्रवणबेलगोल से मगध वापस लौटने के बाद भद्रबाहु के अनुयायियों ने इस निर्णय को मानने से इंकार कर दिया कि 14 *पर्व* खो गये थे। मगध में ठहरने वालों तथा प्रस्थान करने वालों में मतभेद बढ़ते ही गये। मगध में ठहरने वाले सफेद वस्त्रों को धारण करने के अभ्यस्त हो चुके थे और वे महावीर की शिक्षाओं से दूर होने लगे, जबकि पहले वाले नग्न अवस्था में रहते और कठोरता से महावीर की शिक्षाओं का अनुसरण करते। अतः जैन धर्म का प्रथम विभाजन *दिगम्बर* (नग्न रहने वालों) और *श्वेताम्बर* (सफेद वस्त्र धारण करने वालों) के बीच हुआ।

अगली शताब्दियों में पुनः दोनों सम्प्रदायों में कई विभाजन हुए। इनमें महत्त्वपूर्ण वह सम्प्रदाय था जिसने मूर्ति-पूजा को त्याग दिया और ग्रंथों की पूजा करने लगे। वे *श्वेताम्बर* सम्प्रदाय में *थेरापन्थी* कहलाए और *दिगम्बर* सम्प्रदाय में *समैयास* कहलाए। यह सम्प्रदाय छठी शताब्दी सी.ई. के आसपास अस्तित्व में आया।

12.6 अन्य विधर्मिक विचार

अनेक ऐसे गैर ब्राह्मणवादी विधर्मी सम्प्रदाय थे जो ऐसे विचारों को प्रतिपादित कर रहे थे जो रूढ़िवादी ब्राह्मण मान्यताओं से भिन्न थे। ये बुद्ध के समकालीन थे जैसा कि *दीर्घनिकाय* के *सुमन्न फल सुत्त* में उल्लेखित है। इन शिक्षकों का उल्लेख मुख्य रूप से एक समूह के रूप में है, व्यक्तिगत रूप में नहीं। उनकी शिक्षाओं को लेकर बहुत विभ्रान्ति है और उनको जानने के लिए बहुत सावधानी की ज़रूरत है। इन सम्प्रदायों के बारे में जानकारी के लिए बौद्ध और जैन स्रोत मुख्य हैं।

सुमन्न फल सुत्त में उल्लेख है कि जब बुद्ध 1250 भिक्खुओं के साथ राजगृह में विराजमान थे तब राजा अज्ञातशत्रु को आध्यात्मिक मार्गदर्शन की ज़रूरत महसूस हुई। उनके मंत्रियों ने तब एक के बाद एक निम्नलिखित विधर्मी शिक्षकों के नाम सुझाएः

1) पुरन कस्सप
2) मक्काली गोशाला
3) अजिता केसकम्बलिन
4) पाकुध कच्छायन
5) संजय बेलाथिपुत्ता
6) निगंध नातपुत्त

प्रत्येक को एक गण के नेता (गणचार्यों) के रूप में उल्लेखित किया गया है जो प्रसिद्ध और एक सम्प्रदाय के संस्थापक (तीथ्याकरों), एक सन्त के रूप में सम्मानित (साधु-सामत्तों), अनेक लोगों की श्रद्धा पाने वाले, लम्बे समय से बेघर घुमन्तु (चिरपब्बाजित्रों) और दीर्घआयु हैं। अब हम प्रत्येक की शिक्षाओं की संक्षेप में चर्चा करेंगे।

1) पुरन कस्सप ने अक्रिया या गैर-क्रिया के सिद्धान्त का प्रचार किया। वह एक ब्राह्मण शिक्षक था, जिसका मुख्य सिद्धांत यह था कि क्रिया से कोई पाप या पुण्य पैदा नहीं होता। उनके अनुसार, भले ही एक आदमी ने पृथ्वी के सभी प्राणियों को मार दिया हो, लेकिन उसे कोई पाप नहीं लगेगा। इसी तरह, वह अच्छे कर्मों के माध्यम से या गंगा के किनारे खड़े रहकर भी कोई योग्यता अर्जित नहीं करेगा। इसी तरह, आत्म-नियंत्रण, उपहार और सत्यता से कोई श्रेय प्राप्त नहीं होता।

2) मक्काली गोशालाः इसमे नियतिवाद का एक सिद्धान्त नियत किया गया है। आजिवक सम्प्रदाय के सबसे प्रसिद्ध शिक्षक, मक्काली गोशाला के अनुसार, जीवित प्राणियों के पाप का कोई कारण नहीं है। और न ही जीवों की पवित्रता का कोई कारण या आधार है। कोई भी कर्म किसी के भविष्य के जन्म को प्रभावित नहीं कर सकते। कोई भी मानवीय क्रिया, शक्ति, साहस या मानवीय सहनशीलता किसी की नियति को प्रभावित नहीं कर सकते। सभी व्यक्ति शक्ति, सामर्थ्य या नैतिक गुणों के बिना है। उनको नियाही, संयोग और प्रकृति प्रेरित करती है। (नीचे और अधिक विस्तार से आजिवकवाद के बारे में चर्चा करेंगे।

3) अजित केसकम्बलिन भिक्षा देने, बलि देने या आहुति देने में कोई श्रेय नही है। अच्छे या बुरे कर्म क्रमशः अच्छे या बुरे कर्म का कारण नहीं बनते हैं। आत्मा का कोई स्थानांतरणगमन नही है। कोई भी तपस्वी उचित मार्ग पर पूर्णता तक नहीं पहुँच सकता। मनुष्य चार तत्वों से बना है जब मरता है तो पृथ्वी तत्व पृथ्वी में विलीन हो जाती है, जल जल में, अग्नि अग्नि में, वायु वायु में, इन्द्रिय बोध अन्तरिक्ष में लुप्त हो जाता है।

4) पाकुध कच्छायनः सात अपरिवर्तनशील तत्व हैं। यह है पृथ्वी, अग्नि, जल, वायु, आनन्द, दुख और जीवन। भले ही एक आदमी दूसरे का सिर तलवार से काट दे, लेकिन वह उसकी जान नहीं लेता क्योंकि उसकी तलवार तो इन सात तत्वों से होकर गुज़रती है। यह अशाश्वत-वाद का सिद्धान्त है। ये सात तत्व किसी खुशी या दर्द का कारण नहीं बनते।

5) संजय बेलाथिपुत्ताः अगर आप मुझसे पूछते हैं, 'क्या कोई अन्य दुनियाँ है? और अगर मुझे लगता है कि दूसरी दुनियाँ थी, तो मुझे आपको वह बताना चाहिए। लेकिन मै वेसा नहीं कहता। मै नहीं कहता कि यह ऐसा है, मैं यह नहीं कहता कि यह अन्यथा है, मैं यह नहीं कहता कि ऐसा नहीं है; नहीं मैं कहता हूँ कि ऐसा नहीं है, नहीं मै कहता हूँ कि ऐसा नहीं-नहीं है'। स्पष्टतः ऊपर वर्णित पक्तियाँ व्यंग्यात्मक प्रकृति को रेखांकित करती हैं। यह संशयवादी शिक्षकों का झुकाव था जो उनके समक्ष रखे गये किसी आत्म-विषयक प्रश्न का कोई निश्चित जवाब देने के लिए तैयार नहीं हैं।

6) निगंध नातपुत्तः निगंध को जैन धर्म के 24वें तीर्थांकर वर्धमान महावीर के रूप में पहचाना जा सकता है। चर्तुमार्गी सयंम एक अवरोध है जो एक निगंध को घेरता है। सभी पापों से बचकर वह परिपूर्ण नियंत्रित और दृढ़ बन जाता है।

12.7 आजिवक संप्रदाय

आजिवक सम्प्रदाय का सबसे प्रमुख शिक्षक मक्काली गोशाला (चित्र 12.8) था।

चित्र 12.8 : तीसरी शताब्दी बी.सी.ई. में आजिवक की भिक्षु गुफाएँ (बराबर पहाड़ियां, गया के पास बिहार में स्थित)। श्रेयः फ्रेजर पेपे 1870। स्रोतः विकिमीडिया कॉमन्स https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Barabar_hill_with_Sudama_and_Lomas_Rishi_caves.jpg

वह एक समय महावीर के साथ निकटता से जुड़ा हुआ था, लेकिन बाद में एक अलग मार्ग पर चल पड़ा। आजिवक भाग्यवाद के सिद्धान्त में यकीन करते थे। इस सिद्धान्त के इर्द-गिर्द एक नया सम्प्रदाय विकसित हुआ जो नग्न घुमन्तु लोगों का था और जो तपस्चर्या के लिए समर्पित थे। वे मौर्य काल तक लोकाप्रिय थे। अशोक और उसके उत्तराधिकारी दशरथ ने भी आजिविकाओं को संरक्षण दिया था। इस अवधि के बाद, उत्तर भारत में, आजिवक समुदाय ने अपना प्रभाव खो दिया और जल्द ही महत्वहीन हो गया। बौद्ध धर्म, जैन धर्म और आजिवकवाद के तीन विधर्मी समप्रदायों में बहुत कुछ समान था। तीनों ही ब्राह्मणवादी धर्म के बलिदान संबंधी कर्मकांड और *उपनिषदों* के अद्वैतवादी सिद्धान्तों के खिलाफ थे। आजिविकाओं (चित्र 12.9) ने *वेदो* के प्राकृतिक मनुष्य गुणारोपण और *उपनिषदों* के विश्व-आत्मा सिद्धान्त के स्थान पर ब्रह्मंडीय सिद्धांतों की शुरुआत की। तीनों धर्मों ने ब्रह्मांड में प्राकृतिक नियम को मान्यता दी।

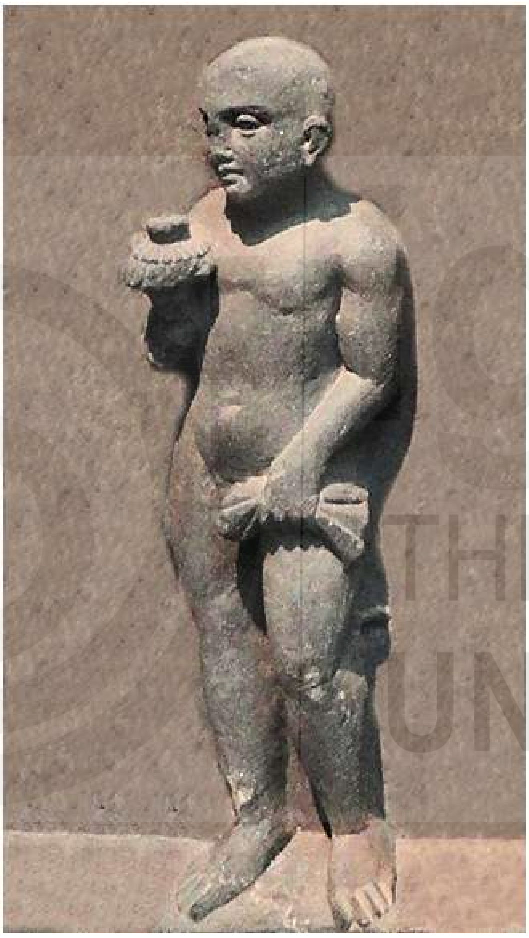

चित्र 12.9 : महापरिनिर्वाण की गांधार मूर्तिकला में एक आजिवक भिक्षक। श्रेयः डेडरो। स्रोतः बुद्ध के जीवन के चार दृश्य-परिनिर्वाण-कुषाण वंश दूसरी शताब्दी के उत्तरार्ध से तीसरी शताब्दी के आरंभ तक गांधार, शिस्ट, फ्रियर आर्ट गैलरी चित्र श्रेयः विकिमीडिया कॉमन्स (https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Ajivika_Monk_in_a_Gandhara_sculpture_of_the_Mahaparinirvana.jpg)

आजिवक नियति में यकीन करते थे जो सर्वव्यापी क्रम का सिद्धान्त था। उनके अनुसार नियति ही सब-कुछ, सभी क्रियाओं, सभी घटनाओं की नियंत्रित करती थी। मानवीय इच्छा शक्ति की कोई भूमिका नहीं थी और वह पूरी तरह निष्प्रभावी थी। इस प्रकार, कठोर निर्धारणवाद आजिवकवाद का केन्द्रीय सिद्धान्त था। उन्होंने सख्त तपस्चर्या को अपनाया जो अक्सर उपवास द्वारा मृत्यु में समाप्त होता था।

बौद्ध और जैन दोनों स्रोतों के अनुसार, मक्काली गोशाला ने ब्रह्मांड के प्रेरक कारक और दृश्य-परिवर्तन के एकमात्र घटक के रूप में नियति की धारणा को बुलंद किया। उनके लिए भाग्य की शक्ति का कोई कारण या आधार नहीं था जबकि कर्म को मानने वाले अन्य सम्प्रदाय पाप और पीड़ा को उत्तरदायी मानते थे। कर्म सदाचार से, व्रतों से, प्रायश्चित से, शुद्धता से अप्रभावित रहता था, लेकिन कर्म को अस्वीकृत नहीं किया गया। आजिविकाओं को आत्मा के स्थानान्तरणगमन में यकीन था और वह मानते थे कि प्रत्येक आत्मा को 84 लाख महाकल्प की अवधि से होकर गुज़रना ही पड़ेगा। सभी प्राणी *प्रारब्ध* (नियति), *सयोंग* (संगति) और *प्रकृति* (भाव) से प्रेरित थे।

वैदिक, बौध और जैन दार्शनिक प्रणालियाँ स्वतन्त्र इच्छा को कुछ स्थान देती हैं। भाग्यवाद उनमें प्रमुखता से नहीं आता है। यद्यपि कर्म के भारतीय सिद्धान्त को इस जन्म में या अगले जन्म में दुख और सुख का कारण माना जाता है, लेकिन व्यक्ति की स्वतंत्र इच्छा को श्रेय भी दिया जाता है जिससे वह सही कर्म चुनकर अपनी स्थिति सुधार सकता है और अन्नतः मोक्ष भी पा सकता है। इस सिद्धान्त का गोशाला ने विरोध किया।

12.8 नए धार्मिक आंदोलनों का प्रभाव

नये धार्मिक विचारों के प्रादुर्भाव एवं विकास ने समकालीन सामाजिक जीवन में कुछ विशेष परिवर्तन किए। उनमें कुछ महत्त्वपूर्ण परिवर्तन निम्नलिखित हैं :

i) इस काल में सामाजिक समानता के विचार को लोकप्रिय किया गया। बौद्ध तथा जैनियों ने जाति-व्यवस्था को कोई महत्त्व नहीं दिया। उन्होंने विभिन्न जातियों के लोगों को अपने धर्म में स्वीकृत किया। युगों से समाज में ब्राह्मणों के स्थापित प्रभुत्व को यह एक महान चुनौती थी। बौद्ध व्यवस्था में महिलाओं को स्वीकार करने का समाज पर एक विशेष प्रभाव हुआ क्योंकि इस कार्य ने महिलाओं को पुरुषों के समान स्थान समाज में प्रदान किया।

ii) ब्राह्मणिक साहित्य में व्यवसाय करने वाले लोगों को छोटा स्थान दिया गया था। समुद्र यात्रा की भी निंदा की गई थी। लेकिन बौद्ध धर्म और जैन धर्म ने जाति व्यवस्था को कोई महत्त्व नहीं दिया और न ही समुद्र यात्रा को गलत समझा। इसलिए इन नये धर्मों ने व्यापारिक समुदाय को काफ़ी उत्साहित किया। इससे भी अधिक, इन दोनों धर्मों के द्वारा *कर्म* की अवधारणा पर भविष्य के जीवन के लिए बल देना अप्रत्यक्ष रूप से व्यापारी समुदाय की गतिविधियों के लिए अनुकूल था।

iii) नये धर्मों ने प्राकृत, पाली और अर्धमगधी जैसी भाषाओं को महत्त्व दिया। बौद्ध एवं जैन दर्शनों की इन भाषाओं में विवेचना की गई और बाद में धार्मिक पुस्तकों को स्थानीय भाषाओं में लिखा गया। इसने स्थानीय भाषाओं के साहित्य के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। जैनियों ने अपने धार्मिक उपदेशों को अर्धमगधी भाषा में लिखकर प्रथम बार साहित्य को मिश्रित भाषा में लिखने का स्वरूप प्रदान किया।

बोध प्रश्न 2

1) आजिवक कौन थे? उनके क्या विचार थे?

....

....

....

2) निम्न कथनों में कौन-सा कथन (✓) सही है और कौन-सा गलत (×) निशान लगाइए।

   i) व्यापार और वाणिज्य की वृद्धि ने विधर्मिक विचारों के उद्भव में मद्द की ( )

   ii) बुद्ध ने बोधगया में अपना पहला उपदेश दिया ( )

   iii) महावीर ने ब्रह्मचर्य के विचार को पार्श्वनाथ के चार सिद्धांतों से जोड़ा ( )

   iv) महावीर सर्वोच्च निर्माता में विश्वास नहीं करते थे ( )

   v) निर्वाण की अवधारणा बौद्ध धर्म और जैन धर्म में समान है ( )

12.9 सारांश

इस इकाई में आपने लगभग छठी शताब्दी बी.सी.ई. में उत्तरी भारत में नवीन धार्मिक विचारों के उद्भव और स्थापित होने के विषय में पढ़ा। समकालीन सामाजिक-आर्थिक आवश्यकताओं ने इन नवीन धार्मिक विचारों के प्रादुर्भाव में विशेष योगदान दिया। इनमें से बौद्ध धर्म तथा जैन धर्म अत्यधिक लोकप्रिय हुए। कुछ आपसी मतभेद होने के बावजूद दोनों धर्मों ने मानवता, नैतिक जीवन, *कर्म* और *अहिंसा* पर ज़ोर दिया। जाति-व्यवस्था, ब्राह्मणिक प्रभुत्व, पशु-बलि और ईश्वर के विचार के दोनों ही कठोर आलोचक थे। स्थापित वैदिक धर्म के लिए यह सीधी चुनौती थी। इसके अतिरिक्त अन्य भिन्नमत सम्प्रदायों जैसे *आजिवकों* और उनके विचारों के विषय में भी आपने जाना। इन सबके कारण सामान्य जन के दृष्टिकोण में एक विशेष परिवर्तन हुआ और इसके परिणामस्वरूप उन्होंने युगों पुरानी ब्राह्मणिक धर्म की सर्वोच्चता के प्रभुत्व पर प्रश्न लगाना आरंभ कर दिया।

12.10 शब्दावली

अहिंसा : किसी की हत्या न करना और न ही हिंसा करना।

विधर्मिक : गैर रूढ़िवादी।

भौतिकवाद : भौतिक वस्तुओं पर अधिक बल देना।

पिटक : बौद्ध धर्म के धार्मिक ग्रंथ।

पूर्व : जैनियों के धार्मिक ग्रंथ।

सम्प्रदाय : मत एवं विश्वास के आधार पर लोगों या गुटों का एकीकरण।

तीर्थांकर : जैन धर्म के वे विद्वान या गुरु जिन्होंने सर्वोच्च "ज्ञान" की प्राप्ति की।

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखिए भाग 12.3

2) देखिए भाग 12.4

बोध प्रश्न 2

1) आजिवक एक संप्रदाय था जिसका सबसे प्रमुख शिक्षक मक्काली गोशाला था। वह नीती या भाग्य के सिद्धांत में विश्वास करता था। कठोर निर्धारणवाद और परमाणु सिद्धांत, आजिविकाओं के दो केंन्द्रीय सिद्धांत थे। देखें भाग 12.7।

2) i) ✓ ii) × iii) ✓ iv) ✓ v) ×

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

12.12 संदर्भ ग्रंथ

ऑलचिन, ब्रिजेट तथा रेमंड (1988). *द राइज ऑफ सिविलाइजेशन इन इंडिया एण्ड पाकिस्तान.* नई दिल्ली।

घोष, ए. (1973). *द सिटी इन अर्ली हिस्टॉरिकल इंडिया.* शिमला।

कोसाम्बी, डी. डी. (1987). *द कल्चर एण्ड सिविलाइजेशन ऑफ एशियंट इंडिया इन हिस्टॉरिकल आउटलाइन.* नई दिल्ली।

शर्मा, आर. एस. (1983). *मटीरियल कल्चर्स एण्ड सोशल फॉरमेशंस इन ऐशियंट इंडिया.* नई दिल्ली।

शर्मा, आर. एस. (1995). *पर्सपेक्टिवस इन सोशल एण्ड इकॉनोमिक हिस्टरी ऑफ एशियंट इंडिया.* नई दिल्ली।

वाग्ले, एन. के. (1966). *सोसाइटी एट द टाइम ऑफ द बुद्ध.* बॉम्बे।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY